(2) स्वामी विवेकानन्द
(Swami Vivekanand)

जीवन-वृत्त (Life-Sketch)

स्वामी विवेकानन्द का जन्म सन् 1863 ई० में कलकत्ता के एक क्षत्रीय परिवार मे हुआ था। इनके जन्म का नाम **नरेन्द्र नाथ दत्त** था। नरेन्द्र जी के पिता **श्री विश्वनाथ दत्त** कलकत्ता हाईकोर्ट के वकील थे। उनका पारिवारिक वातावरण धार्मिक था। इसलिए उन्हें बाल्यवस्था से ही, धर्म-कर्म, पूजा-पाठ तथा धार्मिक ग्रन्थों के अध्ययन में रुचि उत्पन्न हो गई। जब वे पाँच वर्ष के हुए तो उन्हें स्कूल भेज दिया गया। वहाँ उन्होंने इतिहास और साहित्य के साथ-साथ दार्शनिक परम्परा का पूर्ण ज्ञान प्राप्त करके पाश्चात्य दर्शन का भी विस्तृत अध्ययन किया। **हरबर्ट स्पेन्सर तथा जॉन स्टुअर्ट** मिल उनके प्रिय दार्शनिक थे तथा वर्ड्सवर्थ एवं शैले उनके प्रिय कवि थे। एक बार उनके प्रधानाचार्य श्री **हेस्टी** ने उनके बारे में कहा था– *"मैं बहुत दूर घूमा हूँ, पर मैंने इतना गुणवान एवं प्रतिभावान बालक जर्मन के विश्वविद्यालयों में भी नहीं देखा।"* एक दिन हेस्टी साहब ने उनका सम्पर्क स्वामी रामकृष्ण परमहंस जी से कराया। स्वामी जी का नरेन्द्र जी के ऊपर ग्रहरा प्रभाव पड़ा। उनके सम्पर्क में नरेन्द्र जी छः वर्ष रहे तथा आध्यात्मिक ज्ञान प्राप्त करके नरेन्द्र से स्वामी विवेकानन्द बन गये। **सन् 1886 ई०** में स्वामी रामकृष्ण परमहंस जी का निधन हो गया। स्वामी विवेकानन्द ने अपने गुरु की स्मृत्ति में रामकृष्ण मिशन स्थापित किया तथा उनके द्वारा दिये हुए वेदान्त के उपदेशों का एशिया, यूरोप तथा अमेरिका की जनता में आजीवन प्रचार किया। संक्षेप में स्वामी जी ने पाश्चात्य देशों में भावात्मक तथा भारत में क्रियात्मक वेदान्त का प्रचार करके हिन्दू धर्म की महानता को फैलाया। उन्होंने अपने अन्तिम दिनों में विश्व-बन्धुत्त्व के लिए भी प्रचार किया। सन् 1902 ई० में स्वामी जी का स्वर्गवास हो गया।

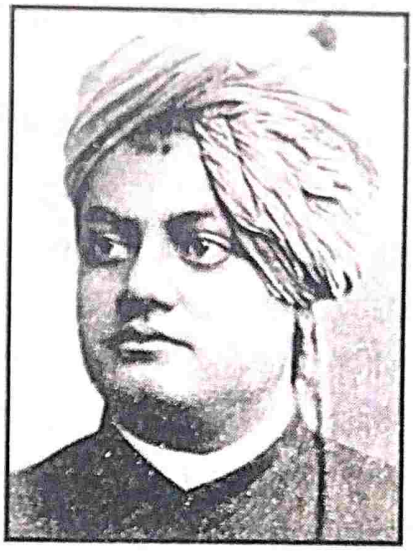

विवेकानन्द का जीवन-दर्शन
(Vivekanand's Philosophy of Life)

जहाँ कहीं स्वामी विवेकानन्द मंच पर खड़े हुए, वहीं उनके रूप की प्रशंसा हुई। उनके शरीर और चेहरे की प्रशंसा हुई और उनकी गहरी आँखों पर स्त्री-पुरुष मुग्ध हुए, किन्तु माता-पिता के बहुत प्रयत्न करने पर भी उस सुदर्शन युवक का विवाह नहीं हुआ। उनकी बुद्धि, प्रतिभा, स्मरणशक्ति और भाषा को विश्व भर में अद्वितीय माना गया; किन्तु इस प्रतिभा और योग्यता के बावजूद उन्हें अपने देश में एक छोटी-सी नौकरी तक नहीं मिल पाई।

जब अत्यंत निर्धनता की स्थिति ईश्वरचन्द्र विद्यासागर के एक विद्यालय में अध्यापक की नौकरी मिली तो गुरु की सेवा करने के लिए उन्होंने उस नौकरी को त्याग दिया। कहा कि नौकरियाँ बहुत मिलेंगी, ठाकुर

कब-कब मिलते हैं। जब हार्वर्ड विश्वविद्यालय में प्राच्य दर्शन की पीठाधीश की नौकरी का प्रस्ताव आया तो उन्होंने कहा कि संन्यासी नौकरी नहीं करता ज्ञान बाँटता है। अर्थात्, उन्हें नौकरी करनी ही नहीं थी। वह तो किसी उच्च उद्देश्य के लिए इस संसार में आए थे। उन्होंने अपने लिए कभी कुछ नहीं चाहा, जो कुछ चाहिए था वह भारत माता की संतान के लिए चाहिए था; और बाद में तो वे राष्ट्र की सीमाएँ भी पार कर गए, जो कुछ चाहिए था, विश्व मानवता के लिए चाहिए था।

गुरु के देहात के पश्चात् जब उनके गुरु भाई अपने-अपने घर लौट गए, और वह उन्हें संगठित करने का प्रयत्न कर रहे थे; उन्हें निरंतर अवमानना ही नहीं अपमान का सामना करना पड़ा रहा था। एक दिन तो माता भुवनेश्वरी रो पड़ी, तू क्यों उनके घर जाता है, जहाँ तेरा इतना अपमान होता है। स्वामी का उत्तर था, माँ, व्यक्ति का मान क्या और अपमान क्या? यह तो माया है; और मेरी माया मर चुकी है। मान अपमान होता है देश का, धर्म का, संस्कृति का। अपने इस कथन को उन्होंने अपने आचरण से प्रमाणित भी किया। अमेरिका के एक रेलवे स्टेशन पर जब एक नीग्रो कुली ने उन्हें अपना जाति-भाई समझकर हाथ मिलाना चाहा, तो स्वामी ने आगे बढ़कर उसे गले लगा लिया। स्वामी जी के अमेरिकी मित्रों ने कहा भी कि आप उसे बताते क्यों नहीं कि आप अफ्रीकी नहीं, भारतीय हैं? स्वामी का उत्तर था, मैंने इसलिए जन्म नहीं लिया है कि स्वयं को बड़ा बताकर दूसरों को हीन सिद्ध करूँ और ठीक उसके विपरीत जब भारत लौटते हुए, जलपोत पर एक ईसाई पादरी उनके बार-बार रोकने पर भी हिन्दू धर्म के विषय में अपशब्द कहता ही रहा, तो वह क्रुद्ध होकर बोले, अब एक भी अपशब्द कहा तो तुम्हें उठाकर समुद्र में फेंक दूंगा।

कन्याकुमारी में अपनी समाधि से उठकर उन्होंने कहा था, मैंने देखा है कि भारतमाता और जगदंबा में कोई भेद नहीं है। भारतमाता की पूजा ही जगदंबा की पूजा है। भारतमाता की सेवा का अर्थ हैद्व भारत की संतान की सेवा। हमारी दो ही समस्याएँ हैं—दरिद्रता और अशिक्षा। और दरिद्रता का कारण भी हमारी अशिक्षा ही है। इसलिए वह जहाँ कहीं भी गए, शिक्षा का प्रचार किया। राजा अजितसिंह के महल की छत पर भौतिकी की प्रयोगशाला खुलवा दी। लंदन से मंगवा कर एक टेलिस्कोप लगवा दिया। उन्होंने कहा कि जिन जातियों को शिक्षा से वंचित रखा गया है उन्हें शिक्षा दो। कन्याओं को शिक्षा दो। स्त्री शिक्षा के लिए भगिनी निवेदिता को शिक्षा-मिशनरी बनाकर ही भारत लाए।

हम सामान्यत: यही जानते हैं कि स्वामी जी ने शिकागो में एक भाषण किया और प्रसिद्ध हो गए। उनके चारों ओर जैसे गुलाब के फूल बिछ गए। हम यह नहीं जानते कि उसी भाषण और उसी प्रशंसा के कारण अमेरिका और यूरोप के अनेक पादरी उनके शत्रु हो गए। कोलकाता से गए ब्रह्म समाज के प्रतिनिधि प्रतापचंद्र मजूमदार ने कोलकाता समाचार भेजे कि यह व्यक्ति संन्यास त्यागकर यहाँ दूसरों के धन के माध्यम से पराई स्त्रियों के साथ भोग-विलास कर रहा है। अमेरिका में प्रचार किया कि यह व्यक्ति संन्यासी है ही नहीं। उनके मित्रों के घर पत्र भेजे गए कि वे अपनी बहू-बेटियों की इस संन्यासी से रक्षा करें; और अंत में एक पार्टी में रात्रि भोजन के पश्चात् उन्हें कॉफी में विष दिया गया।

इतने अवरोधों को पार करते हुए यह संन्यासी अपने देश से सहस्त्रों मील दूर, अकेला, शब्द के माध्यम से बिना अपने देश से किसी प्रकार का समर्थन पाए, भारत माता के सम्मान की रक्षा करता रहा और जो लोग वेदांत की शब्दावली से परिचित भी नहीं थें, उन्हें वेदांत का ज्ञान देकर, अध्यात्म का अनुभव कराता रहा।

विवेकानन्द का शिक्षा-दर्शन
(Vivekanand's Philosophy of Education)

स्वामी विवेकानन्द के अनुसार कोई व्यक्ति किसी दूसरे व्यक्ति को नहीं सिखाता। प्रत्येक व्यक्ति अपने आप स्वयं ही सीखता है। बाहरी शिक्षक तो केवल सुझाव ही प्रस्तुत करता है जिससे भीतरी शिक्षक को समझने और सीखने के लिए प्रेरणा मिल जाती है। इसी दृष्टि से स्वामी जी ने अपने समय की शिक्षा को निषेधात्मक

बताया तथा लोगों से कहा– *"आप उस व्यक्ति को शिक्षित मानते है जिसने कुछ परीक्षायें पास कर ली हों तथा जो अच्छे भाषण दे सकता हो। पर वास्तविकता यह है कि जो शिक्षा जनसाधारण को जीवन-संघर्ष के लिए तैयार नहीं कर सकती, जो चरित्र निर्माण नहीं कर सकती, जो समाज सेवा की भावना को विकसित नहीं कर सकती तथा जो शेर जैसा साहस पैदा नहीं सकती, ऐसी शिक्षा से क्या लाभ है।"* हमें उस शिक्षा की आवश्यकता है जिसके द्वारा चरित्र का निर्माण होता है, मस्तिष्क की शक्ति में वृद्धि होती है, बुद्धि विकसित होती है तथा जिसको प्राप्त करके व्यक्ति अपने पैरों पर खड़ा हो सकता है।

उपर्युक्त पंक्तियों से स्पष्ट हो जाता है कि स्वामी विवेकानन्द का शिक्षा के प्रति अत्यन्त विस्तृत दृष्टिकोण रहा है। संक्षेप में, स्वामी विवेकानन्द ने सैद्धान्तिक शिक्षा का खण्डन करते हुए व्यावहारिक शिक्षा पर बल दिया। इस सम्बन्ध में उन्होंने भारतीयों को समय-समय पर सचेत करते हुए कहा– *"तुमको कार्य के प्रत्येक क्षेत्र को व्यावहारिक बनाना पड़ेगा। सम्पूर्ण देश का सिद्धान्तों के ढेरों ने विनाश कर दिया है।"*

उनके शिक्षा दर्शन-सम्बन्धी आधारभूत सिद्धान्तों पर हम निम्नलिखित पंक्तियों में प्रकाश डाल रहे हैं–

(1) पुस्तकों का अध्ययन ही शिक्षा नहीं है।

(2) ज्ञान व्यक्तियों के मन-में विद्यमान है। वह स्वयं ही सीखता है।

(3) चित्त की एकाग्रता की शक्ति ज्ञान प्राप्त करने की कुंजी है।

(4) मन, वचन तथा कर्म की शुद्धि आत्म-नियन्त्रण है।

(5) शिक्षा बालक में आत्मिक निष्ठा तथा श्रद्धा विकसित करे एवं उसमें आत्म-त्याग की भावना विकसित करें।

(6) शिक्षा बालक का शारीरिक, मानसिक, नैतिक तथा आध्यात्मिक विकास करें।

(7) शिक्षा से बालक के चरित्र का गठन हो, मन का बल बढ़े तथा बुद्धि का विकास हो।

(8) धार्मिक शिक्षा को पुस्तकों की अपेक्षा व्यवहार, आचरण तथा संस्कारों के द्वारा दिया जाये।

(9) बालक तथा बालिकाओं को समान शिक्षा मिलनी चाहिए।

(10) स्त्रियों को विशेष रूप से धार्मिक शिक्षा दी जाये।

(11) जनसाधारण में शिक्षा का प्रचार किया जाये।

(12) तकनीकी शिक्षा की व्यवस्था की जाये जिससे औद्योगिक उन्नति हो।

(13) शिक्षक एक मित्र, दार्शनिक तथा पथ-प्रदर्शक है। उसे सहानुभूतिपूर्ण ढंग से बालक के मस्तिष्क में स्थित ज्ञान का पथ-प्रदर्शन करना चाहिए।

(14) शिक्षक तथा छात्रों का सम्बन्ध अधिक-से-अधिक निकट का हो।

(15) पाठ्यक्रम में उन सभी विषयों को स्थान दिया जाये जिसके अध्ययन से बालक का भौतिक तथा आध्यात्मिक दोनों प्रकार का विकास हो।

स्वामी विवेकानन्द ने शिक्षा के विभिन्न पहलुओं पर भी प्रकाश डाला है जिनका संक्षिप्त विवरण इस प्रकार है–

(1) शिक्षा का अर्थ
(Meaning of Education)

विवेकानन्द ने कहा है कि हमारी शिक्षा जीवन-निर्माण, मनुष्य का निर्माण, शारीरिक, मानसिक, नैतिक, आध्यात्मिक, चरित्र-निर्माण तथा विचारों को आत्मसात् करने वाली होनी चाहिए। उनके वास्तविक शिक्षा वह है जो सामान्य जन-समूह को उनके जीवन की कठिनाइयों से संघर्ष करने लायक बना सके तथा विभिन्नता में

एकता खोज सके। इसी सन्दर्भ में स्वामी जी ने मानव निर्मित (Man making education) की भी बात व है। मानव निर्मित शिक्षा से स्वामी जी का तात्पर्य है कि शिक्षा को ऐसा होना चाहिए जिसके द्वारा चरित्र निर्माण हो सकें, मस्तिष्क की शक्ति को बढ़ाया जा सके। शिक्षा को बुद्धि का विस्तार करने वाली, अपने पैरों स्वयं खड़ा हो सकने वाली तथा व्यक्तित्व के सभी पक्षों का विकास करने वाली होना चाहिए।

(2) शिक्षा के उद्देश्य
(Aims fo Education)

वैयक्तिक उद्देश्यों के अंतर्गत शारीरिक विकास, चारित्रिक तथा आध्यात्मिक विकास, सामाजि विकास, सम्पूर्ण व्यक्तित्व का विकास आदि सम्मिलित हैं। सामाजिक उद्देश्य के अन्तर्गत भाईचारे की भाव का विकास, त्याग की भावना, प्रबुद्ध नागरिकता तथा उत्तरदायित्व की भावना का विकास आदि सम्मिलित हैं।

(3) पाठ्यक्रम
(Curriculum)

ऐसा लगता है स्वामी जी सांस्कृतिक विरासत जो कि इतिहास, काव्य, साहित्य, व्याकरण, भाषा तथ महान व्यक्तियों के जीवन के रूप में अभिव्यक्ति है, उसका शिक्षण प्रदान करने के पक्ष में हैं। वे वेदान्त साहित का अध्ययन, विज्ञान तथा तकनीकी विषयों का शिक्षण तथा लड़कियों के लिए हस्तकौशल (Craft) प्रशिक्ष के हिमायती हैं। स्वामी जी ने पाठ्यक्रम में उन सभी विषयों को सम्मिलित करने का विचार रखा जो आध्यात्मि उन्नति के साथ-साथ भौतिक उन्नति में भी सहायक हों।

(4) शिक्षण-विधि
(Method of Teaching)

स्वामी जी के अनुसार किसी बात को केवल जानने की अपेक्षा उसको समझना तथा उसके अर्थ क जानना अधिक महत्त्वपूर्ण है। वह वाद-विवाद विश्लेषण, तर्क-वितर्क द्वारा सत्य तक पहुँचना शिक्षण-अधिग की आवश्यक युक्तियाँ मानते हैं। वह कहते हैं कि प्रश्नोत्तर, व्याख्या, सादृश्यता, तर्क, उदाहरण का भ शिक्षण-अधिगम प्रक्रिया में प्रयोग किया जाना चाहिए। स्वामी जी स्व-अधिगम (Self-learning) के ऊपर भ जोर देते हैं

(5) अध्यापक
(Teacher)

अध्यापकों में उच्च स्तर की नैतिकता तथा आध्यात्मिकता, पवित्रता तथा पापमुक्त होना चाहिए, धर्मग्रन्थों का ज्ञान, विद्यार्थियों तथा मानवता के प्रति प्यार होना चाहिए। अध्यापक को विद्वान एंव प्रबुद्धि व्यक्ति होना चाहिए। स्वामी जी कहते हैं कि शिक्षक को बच्चे की शिक्षा में एक अहम् भूमिका निभानी होती है। शिक्षक तथा विद्यार्थी के मध्य पिता और पुत्र का सम्बन्ध होना चाहिए। वह गुरु-गृहवास की सिफारिश करते हैं जहाँ पर विद्यार्थी चौबीस घंटे अध्यापक के साथ रहकर उससे निर्देशन प्राप्त करता है।

(6) बालक
(Child)

स्वामी जी ने भी बालक को शिक्षा का केन्द्र-बिन्दु माना है। उनके मतानुसार बालक पेड़ तथा पौधे की भाँति स्वयं ही स्वाभाविक रूप से विकसित होता है। "अपने अन्दर जाओ और उपनिषदों को अपने में से बाहर निकालों, तुम सबसे महान् पुस्तक हो, जपो कभी थी अथवा होगी। जब तक अन्तरामा नहीं खुलती समस्त बाह्य

शिक्षण व्यर्थ है। स्वामी जी का सुझाव है– *"यदि तुम उसे एक बार शेर बनने की अनुमति नहीं दोगे तो वह लोमड़ी बन जायेगा।"*

"If you do not allow him once to become a lion, he will become a fox."

(7) अनुशासन
(Dizscipline)

अनुशासन के सम्बन्ध में स्वामी जी के विचार प्रकृतिवाद से मिलते-जुलते हैं। उनका मानना है कि बालक को स्व-शासन सीखना चाहिए। बालक को किसी भी प्रकार का शारीरिक दण्ड नहीं दिया जाना चाहिए और न ही उसके ऊपर किसी प्रकार का अनुचित दबाव बनाया जाना चाहिए। उसे पढ़ने के लिए पर्याप्त स्वतन्त्रता प्रदान की जानी चाहिए तथा प्रेम एवं सहानुभूतिपूर्ण तरीके से सीखने के लिये प्रेरित करते रहना चाहिए।

(8) स्त्री-शिक्षा
(Women Education)

स्वामी जी स्त्री-शिक्षा के पक्षधर थे। वे समाज में स्त्रियों की दीन-हीन दशा से अत्यन्त क्षुब्ध थे। उनका मत था कि स्त्रियों को समाज में समुचित स्थान मिले। समाज में उन्हें आदर व सम्मान की दृष्टि से देखा जाये। उनका मानना था कि देश के उत्थान की दृष्टि से स्त्री-शिक्षा पर पर्याप्त ध्यान दिया जाना चाहिए। स्वामी जी ने स्वयं कहा कि पहले अपनी स्त्रियों को शिक्षित करो, तब वे आप को बतायेंगी कि उनके लिये कौन से सुधार आवश्यक हैं? उनके मामलों में बोलने वाले तुम कौन हो?

"A Nation is advanced in proportion as education and intelligence is spread among the masses."

(9) जन-शिक्षा
(Mass Education)

स्वामी जी ने जन-शिक्षा पर भी पर्याप्त बल दिया है। देश के पुनरुथान के लिये जनसाधारण की शिक्षा को अनिवार्य बताते हुए वे लिखते हैं, "मेरे विचार जनसाधारण की शिक्षा की अवहेलना करना महान् राष्ट्रीय पाप एवं हमारे पतन का कारण है। जब तक भारत की सामान्य जनता को अच्छी शिक्षा, अच्छा भोजन एवं अच्छी सुरक्षा प्रदान नहीं की जायेगी तब तक राजनीति का भी कोई भविष्य नहीं है। वे हमारी हर दृष्टिकोण से मदद करते हैं और बदले में हम उन्हें क्या देते हैं—दुत्कार एवं ठोकरें। हम उन्हें दास समझते हैं। अत: यदि हम भारत का पुनरुथान करना चाहते हैं तो हमें जन-शिक्षा को शिक्षित करना ही होगा।"

मूल्यांकन
(Evaluation)

स्वामी विवेकानन्द के शिक्षा-दर्शन में प्रकृतिवाद, आदर्शवाद तथा प्रयोजनवाद आदि सभी दार्शनिक विचारधाराओं की झलक दिखाई पड़ती है। प्रकृतिवादियों की भाँति स्वामी जी ने बताया कि सच्ची शिक्षा प्रकृत्ति के सम्पर्क में रहकर ही प्राप्त हो सकती है। आदर्शवादियों की भाँति उन्होंने बताया कि शिक्षा का मुख्य उद्देश्य बालक का आध्यात्मिक विकास करके उसके उस पूर्णत्व की अभिव्यक्ति करना है जो उसमें पहले से ही विराजमान है, ऐसे ही प्रयोजनवादियों की भाँति स्वामीजी ने पाश्चात्य देशों की कला, उद्योग तथा तकनीकी शिक्षा की उपयोगिता को अपनी कला के साथ समन्वित करने का सुझाव प्रस्तुत किया।

वस्तुत: स्वामीजी के शिक्षा-सम्बन्धी विचारों में प्राचीन तथा आधुनिक विचारों का समन्वय है। अत: वे जहाँ एक ओर बालक के आध्यात्मिक विकास पर बल देते हैं वहीं दूसरी ओर वे उसको लौकिक ज्ञान के लिए

भी तैयार करना चाहते हैं। इसी प्रकार स्वामीजी जहाँ एक ओर 'वसुधैव कुटुम्बकम्' के भाव का प्रचार करते हैं वहीं दूसरी ओर वे राष्ट्र को शक्तिशाली बनाने के लिए शक्ति के निर्माण तथा उसके संचय पर भी बल देते हैं। कुछ भी हो स्वामीजी ने मानव जीवन के विभिन्न पक्षों पर अपने विचार व्यक्त किये हैं। उन्होंने बालक के शारीरिक, मानसिक, सामाजिक, व्यावसायिक तथा आध्यात्मिक विकास पर ही बल नहीं दिया अपितु स्त्री-शिक्षा, जनसमुदाय की शिक्षा तथा धार्मिक शिक्षा आदि अनेक पक्षों की विस्तृत व्याख्या करते हुए मानव के चारित्रिक विकास पर बल दिया है।

साथ ही, उन्होंने शिक्षा की सकारात्मक प्रणली प्रस्तुत की। उनहोंने लिखा शिक्षा मनुष्य में पहले से निहित पूर्णता की अभिव्यक्ति है।''

("Education is the manifestation of the perfection already present in man.")

स्वामीजी प्राचीन के धरातल पर नवीन का निर्माण करने के लिये आगे बढ़े। जन-शिक्षा, स्त्री-शिक्षा और व्यावसायिक शिक्षा का नाम बुलन्द करने में वह अग्रणी रहे। उन्होंने समूचे भारत में जन-जागरण का बिगुल बजाया। लोगों में आत्म-विश्वास उत्पन्न किया।

सामाजिक शिक्षा के क्षेत्र में भी विवेकानन्द की महान् देन थी। भारत में सन् 1899 में उन्होंने रामकृष्ण मिशन की स्थापना की जो अब एक विश्वप्रसिद्ध संस्था है तथा सेन फ्रांसिस्को में स्वामी विवेकानन्द के द्वारा स्थापित वेदान्त सोसाइटी का अन्य देशों में भी विस्तार हो गया है।

अन्त में हम यह निष्कर्ष निकाल सकते हैं कि शिक्षा के क्षेत्र में विवेकानन्द की जी का बहुत बड़ा योगदान है। उनके बारे में **पंडित जवाहरलाल नेहरू** जी ने लिखा है, ''भारत के अतीत में सरल आस्था रखते हुए और भारत की विरासत पर गर्व करते हुए स्वामी जी का जीवन की समस्याओं के प्रति दृष्टिकोण आधुनिक था और वह भारत के अतीत तथा वर्तमान के बीच एक बड़े संबंधक थे।'' उन्होंने सार्वभौमिक, स्वतंत्र तथा आवश्यक शिक्षा पर बल दिया। उन्होंने प्रत्येक अध्यापक को प्रत्येक गाँव तथा प्रत्येक व्यक्ति तक पहुँचने के लिये कहा जिससे देश को अज्ञनता से जागृत किया जा सके। उन्होंने गाँधी जी द्वारा गई शिक्षा प्रणाली का भी समर्थन किया था। अत: स्वामी जी के शैक्षिक विचार भारतीय धर्म एवं दर्शन पर आधारित हैं और भारतीय जनजीवन के अनुकूल हैं।